THE STUDY
An Institute for IAS

प्राचीन भारत का इतिहास

मणिकांत सिंह

विषय सूची

अध्याय-01	प्राचीन भारत का इतिहास लेखन	1-8
अध्याय-02	प्राचीन भारत के इतिहास के अध्ययन के स्रोत	9-28
अध्याय-03	प्रागैतिहासिक काल एवं आद्य ऐतिहासिक काल	29-38
अध्याय-04	हड़प्पा सभ्यता	39-70
अध्याय-05	वैदिक काल	71-88
अध्याय-06	महाजनपद काल	89-116
अध्याय-07	मौर्य काल	117-154
अध्याय-08	मौर्योत्तर काल	155-186
अध्याय-09	गुप्त काल	187-216
अध्याय-10	गुप्तोत्तर काल	217-235
अध्याय-11	पल्लव एवं चालुक्य : उद्भव	236-244
अध्याय-12	प्रारंभिक भारतीय सांस्कृतिक इतिहास के प्रतिपाद्य	245-277

अध्याय 04

हड़प्पा सभ्यता

हड़प्पा सभ्यता के अध्ययन के स्रोत

हड़प्पा सभ्यता, आद्य ऐतिहासिक काल से संबद्ध है। हालांकि, हड़प्पाई लोगों के पास एक लिपि थी तथा उन्होंने लेखन कला का भी विकास किया था, किंतु चूंकि यह लिपि अभी तक पढ़ी नहीं जा सकी है इसलिए हम इस सभ्यता के अध्ययन में लगभग पूरी तरह पुरातात्विक सामग्रियों पर ही निर्भर हैं। मेसोपोटामिया के साहित्य में 'मेहुला' का उल्लेख मिलता है इससे मेसोपोटामिया एवं हड़प्पा सभ्यता के बीच व्यापारिक संबंध होने का भी साक्ष्य मिलता है, किंतु मेसोपोटामिया के साहित्य में इसकी चर्चा अत्यधिक सीमित है।

इसलिए हड़प्पा सभ्यता के अध्ययन के लिए हम मुख्यत: पुरातात्विक सामग्री; यथा- भवनों एवं स्मारकों, मुद्रा एवं मुद्रांकन, मृणमूर्तियों एवं अन्य कलाकृतियों पर निर्भर करते हैं। इन्हीं अध्ययन सामग्रियों के आधार पर हड़प्पा सभ्यता के इतिहास के पुनर्लेखन का प्रयास किया गया है।

हड़प्पा सभ्यता के अध्ययन में इतिहास लेखन से संबंधित विवाद:- विवाद से संबंधित निम्नलिखित मुद्दे हैं-

(1) देशी उत्पत्ति बनाम विदेशी उत्पत्ति

(a) एक तरफ **जॉन मार्शल, स्टुअर्ट पिग्गट, अमलानंद घोष, एन.जी. मजूमदार एवं आर. मुगल** जैसे विद्वान हड़प्पा सभ्यता के क्रमिक उद्भव की अवधारणा को स्वीकार करते हैं तथा प्राक् हड़प्पाई चरण की ओर संकेत करते हैं। वहीं दूसरी तरफ **मार्टिमर व्हीलर, क्रेमर**, तथा कुछ अन्य विद्वान इसे मेसोपोटामियाई उत्पत्ति के रूप में दिखाने का प्रयास करते हैं।

(b) इनके अतिरिक्त **ग्रेगरी पॉशेल एवं शिरीन रत्नागर** जैसे विद्वानों ने यद्यपि स्पष्ट रूप में मेसोपोटामियाई उत्पति की बात नहीं कही है किंतु हड़प्पा सभ्यता के उद्भव को मेसोपोटामियाई व्यापार से जोड़ने का प्रयत्न किया है। उसी प्रकार उसके पतन में भी वे मेसोपोटामियाई व्यापार की भूमिका को दिखाने का प्रयत्न करते हैं।

(c) दूसरी तरफ **डी. के. चक्रवर्ती** का मानना है कि ईरान, तुर्कमेनिस्तान तथा ओमान में 1970 के दशक में की गयी खुदाई से यह सूचना नहीं मिल पाती कि आरम्भिक हड़प्पा चरण में भी पश्चिम एशिया के साथ इन क्षेत्रों का व्यापारिक संबंध रहा था, अपितु पूर्ण विकसित अवस्था में ही व्यापारिक संबंधों का विकास देखा जा सकता है। इसलिए मेसोपोटामियाई व्यापार को हड़प्पा सभ्यता के उद्भव से नहीं जोड़ा जाना चाहिए। उसी प्रकार एक दूसरे मत के अनुसार भारतीय क्षेत्र, संसाधनों के मामले में पश्चिम एशिया से कहीं आगे था। इसलिए हड़प्पाई लोगों के आर्थिक जीवन में बाह्य व्यापार की तुलना में आंतरिक व्यापार अधिक महत्वपूर्ण था। यही वजह है कि हड़प्पा सभ्यता के उद्भव एवं पतन में मेसोपोटामियाई व्यापार की भूमिका को अधिक करके नहीं आंका जाना चाहिए।

2. मेसोपोटामियाई उत्पत्ति से संबंधित विवाद:- सर्वप्रथम **ई. जी. एच. मैके, गॉर्डन एवं क्रेमर** ने हड़प्पा सभ्यता के उद्भव में मेसोपोटामियाई उत्पति की अवधारणा पर बल दिया। इनका मानना था कि मेसोपोटामियाई क्षेत्र से सिंधु क्षेत्र की ओर जनसंख्या का प्रवास हुआ तथा नवआगंतुकों के द्वारा इस क्षेत्र में इस सभ्यता की नींव डाली गयी। फिर आगे मार्टिमर व्हीलर ने भी इस मत की पुष्टि की। यद्यपि व्हीलर ने जनसंख्या के प्रवास की जगह विचार के प्रवास पर बल दिया। व्हीलर के अनुसार सभ्यता का विचार पश्चिम एशिया के वातावरण में ही व्याप्त था तथा वहीं से यह विचार उड़कर सिंधु क्षेत्र में पहुँचा। कुछ अन्य विद्वान, जो मेसोपोटामिया से सिंध क्षेत्र की ओर जनसंख्या का पलायन दिखाते हैं। वे यह भी सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं कि नगरीय केंद्रों पर स्थापित दुर्ग क्षेत्र में जो शासक वर्ग के लोग रहते थे, वे कहीं बाहर से आये थे तथा वे स्वयं को यहाँ के देशी निवासियों से पृथक रखने का प्रयत्न करते थे।

किंतु नवीन शोधों के आलोक में उपर्युक्त अवधारणा पुरानी पड़ने लगी। परीक्षण करने पर मेसोपोटामियाई सभ्यता तथा हड़प्पा सभ्यता के बीच कई बिंदुओं पर स्पष्ट अंतर नजर आने लगा,

उदाहरण के लिए:-

1. दोनों सभ्यताओं के बीच मुहर, लिपि तथा औजारों की बनावट में अंतर है।
2. मेसोपोटामियाई सभ्यता की तुलना में हड़प्पा का नगरीकरण कहीं अधिक व्यवस्थित है।
3. हड़प्पा की तुलना में मेसोपोटामिया में ताँबे के उपकरणों का अधिक प्रयोग होता था।

3. क्रमिक उत्पत्ति का सिद्धांत:- इसलिए अब यह माना जाने लगा कि हड़प्पा सभ्यता का उद्भव उन ग्रामीण संस्कृतियों से हुआ जो पश्चिम के विस्तृत क्षेत्र में फैली हुई थीं।

अमलानंद घोष ने राजस्थान में सोथी संस्कृति से इसका उद्भव बताया है। यह अवधारणा उन्होंने सोथी संस्कृति तथा हड़प्पा सभ्यता के बीच मृदभांडों की समानता के आधार पर विकसित की है। आगे इस तथ्य पर गंभीर अध्ययन **एम. आर. मुगल** के द्वारा किया गया। एम.आर. मुगल ने कोलिस्तान क्षेत्र में ग्रामीण संस्कृति का अध्ययन कर उसे हड़प्पा सभ्यता की जननी करार दिया। इस संदर्भ में उन्होंने न केवल मृदभांड, वरन् उपकरण, रहन-सहन, मुहर, लिपि, कला आदि अन्य कारकों का भी व्यापक अध्ययन प्रस्तुत किया है। अत: अब ऐसा माना जाने लगा है कि हड़प्पा सभ्यता की जड़ भारत की भूमि पर ही थी क्योंकि पिछले 8-9 दशकों के शोधों के परिणामस्वरूप, जिनके तहत नये स्थलों की खुदाई हुई, पुराने स्थलों की दोबारा खुदाई हुई तथा पुरानी अध्ययन सामग्री का दोबारा विश्लेषण किया गया तो हड़प्पा सभ्यता के उद्भव के संदर्भ में मान्यता पूरी तरह बदल गई। इस सभ्यता के विकास को बलूचिस्तान एवं अन्य ग्रामीण संस्कृतियों से क्रमिक विकास के रूप में देखा गया। क्रमिक उद्भव के सिद्धांत की यह मान्यता है कि हड़प्पा सभ्यता का विकास कोटदीजी संस्कृति, सोथी-सिसवाल संस्कृति, आमरी-नाल संस्कृति जैसी क्षेत्रीय ग्रामीण संस्कृतियों से हुआ।

अगर हम हड़प्पा सभ्यता के अंतर्गत गुजरात में **धौलावीरा**, हरियाणा में **कुणाल** तथा **पंजाब** में हड़प्पा जैसे स्थलों पर दृष्टिपात करते हैं तो हमें यह ज्ञात होता है कि उपर्युक्त तीनों स्थल प्राक् हड़प्पाई चरण से हड़प्पाई चरण के स्तर पर क्रमिक रूप से संक्रमित होकर विकसित हुए थे।

4. हड़प्पा सभ्यता की नगर निर्माण योजना से संबंधित विवाद:- **मार्टिमर व्हीलर** ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया था कि हड़प्पाई नगरों की बनावट में एक विशिष्ट प्रकार की एकरूपता है, किंतु नवीन शोधों ने यह स्थापित कर दिया है कि एकरूपता के समानान्तर विविधता भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। वस्तुत: हड़प्पा सभ्यता एक विस्तृत क्षेत्र में फैली हुई थी तथा इसे अलग-अलग प्रकार की भौगोलिक एवं जलवायु संबंधी चुनौतियों का सामना करना पड़ा था। इसलिए एकरूपता के समानान्तर विविधता भी कम महत्वपूर्ण नहीं है।

5. हड़प्पा सभ्यता के पतन से संबंधित विवाद :-

मार्टिमर व्हीलर ने हड़प्पा सभ्यता के पतन के संदर्भ में आर्य आक्रमण की अवधारणा दी थी। कुछ अन्य विद्वान भी बाह्य आक्रमण तथा प्राकृतिक आपदा जैसे कारकों को उल्लेखित कर सभ्यता का अकस्मात् पतन दिखाने का प्रयास कर रहे हैं। वहीं दूसरी तरफ 1960 के पश्चात् **मलिक एवं ग्रेगरी पॉशेल** जैसे विद्वानों ने पतन का पूरा अर्थ ही बदल दिया, उन्होंने पतन का अर्थ लगाया नगरों का पतन एवं जनसंख्या का ग्रामीण क्षेत्र में पलायन। इसी के साथ परवर्ती हड़प्पा संस्कृति जैसी अवधारणा आयी।

प्रश्न:- हड़प्पा सभ्यता के उद्भव के संदर्भ में इतिहास के भिन्न दृष्टिकोण क्या हैं?

उत्तर:-भारतीय उपमहाद्वीप में प्रथम नगरीय सभ्यता के उद्भव के संदर्भ में आरंभ से ही एक विवाद रहा है। इसका कारण है इस सभ्यता के संबंध में आवश्यक स्रोत साम्रगी की कमी। इस सभ्यता के उद्भव की व्याख्या में मूलत: दो भिन्न दृष्टिकोण हैं - मेसोपोटामियाई उत्पत्ति बनाम क्रमिक देशी विकास।

सर्वप्रथम मैके, गॉर्डन, क्रेमर और मॉर्टिमर व्हीलर जैसे विद्वानों ने इसके उद्भव की व्याख्या मेसोपोटामियाई उत्पत्ति के संदर्भ में करने का प्रयास किया। किन्तु परवर्ती काल के शोधों के आलोक में यह अवधारणा अस्वीकृत हो गई क्योंकि ऐसा ज्ञात होता है कि मेसोपोटामियाई सभ्यता और हड़प्पा सभ्यता के बीच कुछ मौलिक बातों में अंतर है; यथा- नगरीकरण, मुहरों, लिपि आदि के स्वरूप में अंतर।

किंतु हाल में ग्रेगरी पॉशेल और शिरीन रत्नागर जैसे विद्वानों ने मेसोपोटामियाई कारक पर एक बार फिर बल दिया है जब उन्होंने हड़प्पा सभ्यता के उद्भव को मेसोपोटामियाई व्यापार के प्रतिफल के रूप में देखा।

दूसरा विरोधी विचार, किंतु बहुमान्य विचार है क्रमिक देशी उत्पति की अवधारणा। इसके अनुसार हड़प्पा सभ्यता का उद्भव उत्तर-पश्चिम की ग्रामीण संस्कृतियों के क्रमिक विकास का परिणाम था। हड़प्पा सभ्यता आमरी-नाल संस्कृति, सोथी-सिसवाल संस्कृति

अध्याय 07

मौर्यकाल

अध्ययन के स्रोत:-

मौर्यकाल के अध्ययन के तीन प्रमुख स्रोत हैं:

1. कौटिल्य का अर्थशास्त्र :-

कौटिल्य के अर्थशास्त्र को मौर्यकाल के अध्ययन का प्रमुख स्रोत माना जाता रहा है। हालांकि यह किसी एक काल की कृति नहीं है। इसका संकलन चौथी शताब्दी ई. पू. से लेकर दूसरी तथा तीसरी सदी ई० तक हुआ। फिर भी, हम ऐसा अनुमान कर सकते हैं कि इस ग्रन्थ का महत्वपूर्ण भाग मौर्य काल में संकलित हुआ था क्योंकि हम अशोक के अभिलेख में प्रयुक्त शब्दावलियों तथा कौटिल्य के अर्थशास्त्र की शब्दावलियों के बीच समानता पाते हैं।

भारतीय परम्परा में अर्थ की गणना चार पुरूषार्थों में से एक पुरूषार्थ के रूप में होती है। परम्परागत रूप में अर्थ को हमेशा धर्म के नीचे रखा गया था, किन्तु कौटिल्य के अर्थशास्त्र का महत्व इस बात में है कि इसने धर्म और काम की तुलना में अर्थ को अधिक महत्व दिया क्योंकि उसके विचार में अर्थ ही शेष अन्य पुरूषार्थों का साधन है। इसलिए अर्थशास्त्र का बल पृथ्वी को, जो अर्थ का अक्षय भंडार है, जीतने पर है। अर्थशास्त्र की दृष्टि में वह शासक अधिक सफल है जो अधिक भू-भाग को जीतता है और उस पर नियंत्रण बनाए रख सकता है। चूंकि यह अर्थ पर नियंत्रण बनाए रखने के लिए सैन्य बल तथा कूटनीति पर विशेष बल देता है, इसलिए यह अर्थशास्त्र की तुलना में राजनीतिक शास्त्र अधिक हो जाता है।

इसमें 15 अधिकरण हैं, 5 अधिकरण आंतरिक प्रशासन से संबद्ध हैं, 8 अधिकरण वैदेशिक संबंधों को निर्देशित करते हैं तथा दो अधिकरणों से मिश्रित बातों की सूचना मिलती है। अर्थशास्त्र से तात्कालिक राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्था पर व्यापक प्रकाश पड़ता है। राजनीतिक व्यवस्था में केन्द्रीय स्थल पर राजा को रखा गया है तथा विस्तार से उसके दायित्वों का विवरण दिया गया है तथा मंत्रिपरिषद् की भी सूचना दी गयी है। फिर केन्द्रीय प्रशासन में 18 तीर्थ एवं 27 अध्यक्षों पर प्रकाश डाला गया है। इसके अतिरिक्त प्रान्तीय प्रशासन, स्थानीय प्रशासन, न्याय प्रशासन, नगर प्रशासन, सैन्य व्यवस्था, गुप्तचर व्यवस्था आदि पर भी अर्थशास्त्र ने विस्तृत सूचना प्रदान की है।

किन्तु इस ग्रन्थ की एक महत्वपूर्ण सीमा बतायी जाती है प्रामाणिकता का अभाव। दूसरे शब्दों में, अर्थशास्त्र में जिस राजव्यवस्था की रूपरेखा प्रस्तुत की गयी है वह एक छोटा-सा राज्य है, मौर्य साम्राज्य की तरह कोई विस्तृत साम्राज्य नहीं। अत: प्रश्न यह उपस्थित होता है कि इसे किस रूप में मौर्यकाल की कृति करार दी जाए? वस्तुत: यहाँ हमें ध्यान रखना चाहिए कि अर्थशास्त्र की पद्धति वर्णनात्मक नहीं, अपितु सूत्रात्मक है। अर्थशास्त्र एक विजीगिषु (विजय एवं भौगोलिक विस्तार की ओर उन्मुख राज्य) का विवरण देता है - एक ऐसा राज्य, जो राजनीतिक विस्तार तथा सैनिक विजय की ओर शीघ्रता से उन्मुख हो। अत: ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि यह राज्य मौर्य साम्राज्य के निकट होगा, जो स्वयं ही विस्तार की ओर उन्मुख था।

फिर भी मौर्य काल का अधिक विश्वसनीय विवरण प्राप्त करने के लिए कौटिल्य के अर्थशास्त्र के द्वारा दी गयी सूचनाओं को अन्य स्रोतों से भी परिपुष्ट करने की जरूरत है।

2. मेगस्थनीज की इंडिका :-

मेगस्थनीज प्रथम मौर्य शासक चन्द्रगुप्त मौर्य के दरबार में सीरियाई शासक सेल्यूकस निकेटर का राजदूत बनकर आया था। उसने चौथी सदी के अन्तिम वर्षों की घटनाओं का विवरण प्रस्तुत किया है। वह कई वर्षों तक चन्द्रगुप्त मौर्य के दरबार में रहा था तथा बड़ी जिज्ञासा से उसने एक नये देश, वहाँ की भौगोलिक स्थिति, जलवायु, पशु-पक्षी एवं लोगों से परिचय प्राप्त करने का प्रयास किया था।

मौर्य काल के अध्ययन में मेगस्थनीज की इंडिका को भी आधार बनाया जाता है। मेगस्थनीज ने राजा तथा मौर्य प्रशासन के विभिन्न अंगों पर दृष्टिपात किया है। उसके विचार से राजा अपने दायित्वों को पूर्ण करने के लिए सदा उद्यमशील एवं प्रयत्नशील दिखता है। मेगस्थनीज ने नगर प्रशासन के विवरण में विशेष रूचि दिखाई तथा पाटलिपुत्र के प्रशासन में 6 समितियों को उल्लेखित किया। वह नगर प्रशासन के लिए एस्टेनोमोई नामक अधिकारी को उत्तरदायी मानता है। उसी प्रकार जिला अधिकारी के रूप में वह एग्रोनोमोई नामक अधिकारी

की चर्चा करता है। उसके विचार में वह सिंचाई के विकास के लिए भी उत्तरदायी था। फिर मोस्थनीज सैन्य प्रशासन के लिए भी छः समितियों का विवरण देता है। मेगस्थनीज भारतीय समाज पर दृष्टिपात करते हुए उसे सात जातियों में विभाजित करता है। अगर हम मेगस्थनीज के द्वारा दिये गए विवरणों का मूल्यांकन करते हैं तो हमें यह ज्ञात होता है कि इसके कुछ विवरण अन्य समकालीन स्रोतों से मिलते हैं, किन्तु कुछ विवरण बिल्कुल ही अलग पड़ जाते हैं।

वस्तुतः अध्ययन स्रोतों के रूप में इंडिका की अपनी सीमाएँ भी रही हैं। प्रथम, हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि इंडिका की मूल प्रति लुप्त हो गयी है तथा इसके विषय में हमें जो भी जानकारी प्राप्त होती है परवर्ती काल के लेखकों के उद्धरण से प्राप्त होती है। परवर्ती काल के लेखक हैं डायोडोरस, प्लिनी, स्ट्रेबो और एरियन। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि मेगस्थनीज का अवलोकन दरबार एवं आस-पास के स्थानों तक ही सीमित रहा। अतः इसके विवरण में अनुभव की कमी है। एक विदेशी लेखक होने के नाते कई स्थलों पर उससे तथ्यों को समझने मे भूल हुई है। उदाहरण के लिए, वह कहता है कि सभी भूमि राजा की होती थी, भारत में अकाल नहीं पड़ते थे, भारत में चोरी की घटनाएँ नहीं होती थीं, भारत में दास व्यवस्था नहीं थी, भारतीयों को लेखन कला का ज्ञान नहीं था आदि। यही वजह है कि अध्ययन स्रोत के रूप में इंडिका का उपयोग करने में तथा इसके द्वारा दिए गए विवरण को अन्य समकालीन स्रोतों से भी परिपुष्ट करने की जरूरत है।

3. अभिलेख :- मौर्यकाल के अध्ययन में तीन प्रकार के अभिलेखों का सहारा लिया जाता है।

1. **अशोक से पूर्व के अभिलेख** - चंद्रगुप्त मौर्य के काल के सोहगौरा एवं बंगाल के बोगरा जिले में स्थित महास्थान अभिलेख।
2. **अशोककालीन अभिलेख** - अशोक प्रथम ऐसा शासक था जिसने अपने अभिलेखों के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप में अपनी प्रजा को संबोधित किया। अशोक के अभिलेख अपने स्वरूप में इस बात में भिन्न हैं कि अन्य राजकीय अभिलेखों की घोषणा महज औपचारिक तथा धीसा-पीटा लगती है, जबकि अशोक की घोषणाओं में मौलिकता तथा विचारों की गहराई है। अशोक के अभिलेखों को हम विभिन्न वर्गों में विभाजित कर सकते हैं, यथा -

(a) 14 वृहद् शिलालेख (अशोक के 14 आदेश)

अशोक के 14 वृहद् शिलालेख से तात्पर्य है अशोक के 14 आदेश, जो पहले 8 स्थानों से, फिर 9 स्थानों से मिलते हैं। ये स्थान हैं काल्सी (देहरादून), शाहबाजगढ़ी, मानसेहरा, धौली, जोगड़, गिरनार, सोपारा, एर्रगुड्डी, सन्नाती (कर्नाटक)।

प्रथम अतिरिक्त अभिलेख-धौली

द्वितीय अतिरिक्त अभिलेख- जोगड़

I **प्रथम वृहद् शिलालेखः**- इसमें पशुहत्या तथा समारोह पर प्रतिबंध की बात की गई है।

II **द्वितीय वृहद् शिलालेखः**- इसमें समाज कल्याण से संबंधित कार्य बताए गए हैं।

III **तीसरा वृहद् शिलालेखः**- इसमें वर्णित है कि लोगों में धर्म की शिक्षा देने के लिए युक्त, रज्जुक और प्रादेशिक जैसे अधिकारी पाँच वर्षों में राज्य का दौरा करें।

IV **चौथा शिलालेखः**- इसमें धम्म नीति से संबंधित महत्वपूर्ण विचार व्यक्त हुए हैं। इस अभिलेख में भेरी घोष की जगह 'धम्मघोष' की घोषणा की गई है।

V **पाँचवां शिलालेखः**- इस शिलालेख में अशोक के राज्यारोहण के 13वें वर्ष के बाद धम्म महामात्र की नियुक्ति का उल्लेख है।

(b) **लघु शिलालेखः**- इसमें अलग-अलग आदेश हैं जो अलग-अलग क्षेत्रों में मिले हैं। उदाहरण के लिए, भाब्रु अभिलेख, रूपनाथ, गुर्जरा, मास्की, ब्रह्मगिरी (पालकीगुन्डा) उदेगोलम, निट्टूर आदि। गुर्जरा, मास्की, उदेगोलम, निट्टूर अभिलेख में अशोक का नाम लिखा मिलता है।

(c) **सात स्तम्भलेखः**- इन्हें स्तम्भलेख इसलिए कहा गया है क्योंकि आदेश अशोक के द्वारा निर्मित स्तम्भों पर खुदे हुए हैं। इन्हें सात स्तम्भ अभिलेख के नाम से जाना जाता है क्योंकि इसमें सात आदेश हैं। आरंभ में ये 6 स्थानों से मिले थे जो इस प्रकार हैं; यथा- दिल्ली टोपरा, दिल्ली-मेरठ, लौरिया अरेराज, लौरिया नंदनगढ़, प्रयाग (इलाहाबाद), रामपुरवा तथा एक सातवाँ अभिलेख दक्षिण के अमरावती से भग्न अवस्था में मिला है।

(d) **अन्य स्तम्भ अभिलेखः**- रूम्मिनदेई, निगालीसागर, सारनाथ, कौशाम्बी, पाटलिपुत्र आदि स्थानों से मिले है तथा इनमें आदेश अलग-अलग हैं।

(e) **मिश्रित प्रकार के अभिलेखः**- बिहार के गया की पहाड़ी में अशोक के काल में तीन गुफाएं बनाई गईं तथा उनमें अभिलेख खोदे करवाए गए। इन अभिलेखों से यह सूचना मिलती है कि ये गुफाएं आजीवकों को में दी गयी थी।

अध्याय 09

गुप्त काल

राजनीतिक इतिहास

कुछ शताब्दी पूर्व के मौर्य साम्राज्य की ही तरह गुप्त साम्राज्य का भी भारतीय इतिहास पर स्थायी प्रभाव परिलक्षित होता है। गुप्त कालीन इतिहास के **अध्ययन स्रोत** के रूप में साहित्यिक स्रोत; जैसे- पुराण (विष्णु, वायु, ब्रह्माण्ड), देवीचन्द्रगुप्तम्, मृच्छकटिकम् आदि तथा **पुरातात्विक प्रमाणों** की बहुलता दिखती है। हालांकि शुरूआती चरण में गुप्तों के उद्भव पर स्पष्ट प्रकाश नहीं पड़ता है। एक लम्बे काल से विद्वानों का बल इस बात पर रहा कि गुप्तों का आरम्भिक क्षेत्र मगध है। इस तथ्य को सातवीं सदी के चीनी यात्री इत्सिंग के विवरणों से समर्थन मिला है।

ईसा की तीसरी सदी के अंत में गुप्तवंश का नाम सामने आता है। लगता है कि वे **कुषाणों के सामंत** थे जो थोड़े ही दिनों में उनके उत्तराधिकारी बन बैठे। बिहार तथा उत्तर प्रदेश में अनेक स्थानों पर कुषाण पुरावशेषों के ठीक पश्चात् गुप्त पुरावशेष की प्राप्ति दिखती है। परंतु गुप्त शासकों के लिये बिहार की तुलना में उत्तर-प्रदेश का ही अधिक महत्व का दिखता है क्योंकि प्रारंभिक गुप्त मुद्राएं तथा अभिलेख मुख्यत: इसी क्षेत्र में पाये गये हैं। संभवत: वे अपनी सत्ता का केन्द्र प्रयाग को बनाकर पड़ोस के इलाकों में फैलते चले गये। कुषाणों से प्राप्त सैन्य तकनीक ने उनके प्रसार में व्यापक योगदान दिया। इसके अलावा गुप्त साम्राज्य के सुदृढ़ीकरण में वैवाहिक संबंधों की भी वही भूमिका रही, जो 16वीं और 17वीं सदी के यूरोप के राष्ट्रीय शासकों एवं आरंभिक मगध शासकों के जीवन में रही थी।

गुप्त साम्राज्य के प्रारंभिक राजाओं की चर्चा **समुद्रगुप्त के प्रयाग-प्रशस्ति अभिलेख में मिलती** है। यहाँ वह अपने पूर्वज के रूप में महाराज श्रीगुप्त तथा घटोत्कच गुप्त की चर्चा करता है, परंतु अन्य स्रोतों से इसकी पुष्टि नहीं होती है और न ही उनसे जुड़े हुए सिक्के आदि पुरातात्विक सामग्री ही प्राप्त होती है। गुप्त साम्राज्य **चन्द्रगुप्त प्रथम** के सिंहासनारोहण के साथ ही प्रकाश में आया। चन्द्रगुप्त प्रथम ने ही सर्वप्रथम सोने के सिक्के चलाये तथा महाराजाधिराज की उपाधि ग्रहण की। उसने वैवाहिक संबंधों के माध्यम से अपनी कूटनीतिक एवं राजनीतिक स्थिति को सुदृढ़ किया। उसने लिच्छिवी राजकुमारी कुमारदेवी के साथ विवाह कर उत्तर भारत के एक महत्वपूर्ण राज्य-लिच्छवी राज्य का समर्थन प्राप्त कर लिया। लिच्छवियों के साथ अपने वैवाहिक संबंधों को गुप्त शासकों ने इतना अधिक महत्त्व दिया कि न केवल चन्द्रगुप्त प्रथम ने अपने सिक्के पर कुमारदेवी का नाम खुदवाया, वरन् समुद्रगुप्त ने भी **लिच्छवी दौहित्र** की उपाधि ग्रहण की। दरअसल लिच्छवी एक शक्तिशली राज्य था जो महात्मा बुद्ध के काल से ही उत्तरी बिहार के एक बड़े क्षेत्र पर अधिकार रखता था। फिर, जबकि लगभग स्पष्ट है कि गुप्त संभवत: वैश्य वर्ग से संबद्ध थे, ऐसे में क्षत्रियों से उनका वैवाहिक संबंध होना राजनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण था।

चन्द्रगुप्त प्रथम की विजयों के बारे में जानकारी के स्रोतों की कमी है, परंतु वायुपुराण में अस्पष्ट रूप में चन्द्रगुप्त प्रथम की राज्य सीमा को बताते हुए उसे पूर्व में मगध से लेकर पश्चिम में प्रयाग तक बताया गया है। चन्द्रगुप्त प्रथम ने अपनी विजय के उपलक्ष्य में **319-20 ई. में गुप्त संवत्** की भी शुरूआत की। संभवत: उसने अपने राज्यारोहण के अवसर पर इस संवत् को चलाया था। उसका राज्यकाल 335 ई० तक का माना जाता है। वह अपने जीवन काल में ही अपने पुत्र समुद्रगुप्त को सत्ता की बागडोर सौंपकर सेवानिवृत हो गया।

चन्द्रगुप्त प्रथम के पुत्र **समुद्रगुप्त** (335-380 ई.) ने भारत के एक महान विजेता के रूप में अपनी पहचान बनायी। उसके दरबारी कवि **हरिषेण** के प्रशस्तिपरक लेखन से, जो इलाहाबाद अभिलेख के रूप में सुरक्षित है, इन विजयों पर प्रकाश पड़ता है। इसके अलावा मध्य प्रदेश के सागर जिले में स्थित 'एरण' अभिलेख तथा विभिन्न प्रकार की मुद्राओं; जैसे - गरूड़ प्रकार, धनुर्धारी प्रकार, परशु प्रकार, अश्वमेध प्रकार, व्याघ्रहनन एवं वीणावादन प्रकार की मुद्राओं से उसके संबंध में जानकारी मिलती है।

इलाहाबाद के प्रयाग-प्रशस्ति अभिलेख से ज्ञात होता है कि उसने **पाँच चरणों में अपना विजय अभियान** पूरा किया। **प्रथम चरण** में उन्होंने गंगा-दोआब के नौ राज्यों का समूल नाश किया तथा प्रत्यक्ष रूप से अपने साम्राज्य में मिला लिया। इन राज्यों में अहिच्छत्र, विदिशा एवं चम्पावती के राज्य भी थे। **द्वितीय चरण** में उसने पंजाब

के गणतंत्र तथा कुछ सीमावर्ती राज्यों को जीता। तृतीय चरण में उसने विंध्य क्षेत्र में आटविक राज्यों पर विजय प्राप्त की। फिर **चौथे चरण** में उसने पल्लव राज्य समेत दक्षिण के बारह राज्यों को जीता तथा अंतिम एवं **पाँचवें चरण** में उत्तर-पश्चिम में कुछ विदेशी राज्यों को पराजित किया।

यद्यपि यह सारी सूचना उसके प्रयाग-प्रशस्ति अभिलेख से प्राप्त होती है। यहाँ प्रयाग-प्रशस्ति अभिलेख को थोड़ी सावधानी से ग्रहण करने की आवश्यकता है क्योंकि यह एक प्रशस्ति परक अभिलेख है। यद्यपि प्रयाग-प्रशस्ति के कुछ बातों की पुष्टि वाकाटक अभिलेख से हो जाती है। इस विजय अभियान को पूरा करने के पश्चात् उसने अश्वमेध यज्ञ संपन्न किया तथा **'अश्वमेध पराक्रम'** की उपाधि ली और अश्वमेध प्रकार के सिक्के जारी किये। प्रभावती गुप्त (चन्द्रगुप्त द्वितीय की पुत्री) के पुणे अभिलेख में समुद्रगुप्त को अनेक अश्वमेध यज्ञ करने वाला (अनेकाश्वमेध याजिन) कहा गया है।

अपनी विजयों के परिणामस्वरूप समुद्रगुप्त ने एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की, जो उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में विंध्य पर्वत तक तथा पूर्व में बंगाल की खाड़ी से लेकर पश्चिम में पूर्वी मालवा तक विस्तृत था। दक्षिणापथ के शासक तथा पश्चिमोत्तर भारत की विदेशी शक्तियां उसकी अधीनता स्वीकार करती थीं। समुद्रगुप्त ने यद्यपि एक विशाल क्षेत्र पर अपना शासन स्थापित किया तथापि उसने मुख्य क्षेत्र को ही प्रत्यक्ष नियंत्रण में रखा शेष क्षेत्रों को अधीनस्थ क्षेत्रों के रूप में बनाए रखा। समुद्रगुप्त युद्ध क्षेत्र में जितना स्फूर्तिवान था, शान्ति के समय में उससे कहीं अधिक कर्मठ था। वह स्वयं **उच्चकोटि** का विद्वान तथा **विद्या का उदार संरक्षक** था। वह स्वयं **कुशल वीणावादक** था। अपने कुछ सिक्कों पर उसने स्वयं को वीणा पर गाते हुए दिखाया है। प्रशस्ति में उसके बारे में लिखा गया है कि - **"गन्धर्व विद्या में प्रवीणता के कारण उसने देवताओं के स्वामी इंद्र के आचार्य कश्यप, तुम्बरू, नारद** आदि को भी लज्जित कर दिया था"। विद्या के संरक्षक के रूप में प्रशस्ति में उसके बारे में कहा गया है कि **"उसकी उदारता के फलस्वरूप श्रेष्ठकाव्य (सरस्वती) तथा लक्ष्मी का शाश्वत विरोध सदा के लिये समाप्त हो गया था'।** यहाँ धर्म के अनुसार शासन करने के कारण उसे **"धर्म प्राचीर वंध"** की संज्ञा से भी विभूषित किया गया है। वी. ए. स्मिथ ने उसे भारत के नेपोलियन की संज्ञा दी है।

समुद्रगुप्त के उत्तराधिकारी **चन्द्रगुप्त द्वितीय (380-412 ई.)** के काल में क्षेत्रीय विस्तार एवं सांस्कृतिक उत्थान की दृष्टि से गुप्त साम्राज्य अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गया। चन्द्रगुप्त द्वितीय, जो कि **चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य** के नाम से भी जाना जाता है, ने अपने पिता की विस्तारवादी नीति के साथ अपने पितामह (चन्द्रगुप्त प्रथम) के सामरिक गठबंधन (Martial Alliance) की युक्ति को भी जोड़ दिया था। चन्द्रगुप्त द्वितीय के राज्यकाल के बारे में जानकारी के विभिन्न स्रोत मिलते हैं जिनमें कालिदास के ग्रंथ, चीनी यात्री फाह्यान का यात्रा वृत्तांत, मथुरा स्तंभ एवं शिलालेख, उदयगिरि के दो लेख, गढ़वा अभिलेख तथा साँची से प्राप्त अभिलेख के साथ विभिन्न प्रकार की मुद्राएँ प्रमुख हैं।

शासन संभालने के पश्चात् उसने विजय अभियान प्रारंभ किया। उसकी सबसे बड़ी सफलता थी, शक क्षत्रप रूद्रसिंह तृतीय को पराजित करना तथा गुजरात क्षेत्र पर कब्जा स्थापित करना। उनका संधिविग्रहक वीरसेन यह सूचित करता है कि वह अपने स्वामी के साथ इस प्रदेश को जीतता हुआ यहाँ आया था। दूसरी तरफ विक्रमादित्य ने भी इस उपलक्ष्य में चाँदी के सिक्के मेहरौली स्थित एक लौह स्तंभ पर खुदवाकर अपना विजयोत्सव मनाया था। दिल्ली में मेहरौली स्थित एक लौह स्तंभ पर 'चन्द्र' नामक शासक की विजय का विवरण है। इस 'चन्द्र' नामक शासक की पहचान चन्द्रगुप्त द्वितीय से ही की गई है। इसके विषय में यहाँ कहा गया है कि **उसने पूर्व में बंग तथा पश्चिम में "बाह्लिकों" के विरूद्ध अभियान किया तथा उन्हें** जीता।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने भी वैवाहिक संबंधों का उपयोग अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने के लिये किया। उसने स्वयं नागवंश की राजकुमारी के साथ विवाह किया। माना जाता है कि प्रभावती गुप्त इसी विवाह की संतान थी। दूसरी तरफ उसने अपनी पुत्री का विवाह वाकाटक शासक रूद्रसेन द्वितीय से किया। जब वाकाटक शासक की मृत्यु हुई, तो सैद्धान्तिक रूप में सत्ता का संचालन तो उसकी पुत्री प्रभावती के पास रहा, परंतु व्यावहारिक रूप से वाकाटक राज्य का विलय गुप्त साम्राज्य में हो गया। चन्द्रगुप्त द्वितीय एक कुशल प्रशासक भी था। **चीनी यात्री फाह्यान ने,** जो चन्द्रगुप्त द्वितीय के समय भारत आया था, उसके शासन व्यवस्था की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। वह लिखता है कि इस समय प्रजा सुखी एवं समृद्ध थी, लोग परस्पर सौहार्दपूर्ण ढंग से रहते थे। यद्यपि इस समय मृत्युदंड का प्रचलन नहीं था, तथापि कानून व्यवस्था की समस्या नहीं थी।

चन्द्रगुप्त द्वितीय की पहचान विजेता तथा कुशल प्रशासक के साथ विद्वान, कलाप्रेमी तथा विद्वानों को आश्रय देने वाले शासक का भी है। उसके समय में **पाटलिपुत्र तथा उज्जयिनी शिक्षा के प्रमुख केन्द्र** थे। उसके दरबार में नौ विद्वानों का निवास था जिन्हें नवरत्न के नाम से संबोधित किया जाता था। महाकवि कालिदास संभवतः इनमें अग्रगण्य थे। कालिदास ने इस गुप्त शासक की प्रशंसा

DOWNLOAD APPLICATION

for

HISTORY OPTIONAL COURSE (UPSC/PCS)

Separate Batches for Both

HINDI AND ENGLISH MEDIUM

GET IT ON Google Play

Manikant Singh

App Features

- Complete History Optional Course (for both Medium)
- Weekly Live doubt classes
- Modules wise Courses Available
- Printed Study Material Sent to Home via Post
- Free Weekly/Monthly Test
- Free Demo Videos
- Daily Translated Article of The Hindu, Indian Express etc.

OUR BATCHES

Offline Batch

Online Live Batch

Online Recorded Class

Pen Drive Course

To download Our Application

Our website QR Code

OUR MAINS TEST SERIES PROGRAMME

UPSC | UPPCS | BPSC

Follow us: YouTube

TS PUBLICATIONS

210, Virat Bhawan, IInd Floor, Near Post Office, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-9

: 7683076934, 9999516388, 8287331431, 011-35009789 9999278966

: info@thestudyias.net • thestudyias@gmail.com